अभ्व

जगत् के दो मूल तत्त्व हैं- आभु और अभ्व।[1] अभ्व का अर्थ है- दृश्य जगत्[2] अर्थात् दिखाई देने वाला सारा संसार। यह जगत् परिवर्तनशील है। इसीलिये यह विनाशशील है। इसकी प्रतीति होती है। अत एव अभ्व की व्युत्पत्ति है- 'अभूत्वा भाति' और 'न भवन् भाति'[3] अर्थात् जो संसार का रूप, मनुष्य, पशु, पक्षी, पर्वत, नदी, कीड़े, गाड़ी और घर हैं वे अभ्व के ही रूप हैं। जो वास्तविक रूप में नहीं है परन्तु विद्यमान रहता है। माया और प्रकृति के रूप में अभ्व को जान सकते हैं । बल, कर्म, माया, प्रकृति, मर्त्य, असत्य, आदि को भी अभ्व शब्द का पर्यायवाची माना है। अभ्व शब्द का वैदिक साहित्य में उल्लेख ऋग्वेद, यजुर्वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलता है।

रूप, कर्म और नाम ये तीनों अभ्व के स्वरूप हैं।[4] मन से रूप, प्राण से कर्म और वाक् से नाम बनते हैं । यहाँ रूप का अर्थ है –आकार । रंग भी रूप ही है। जो संसार दिखाई देता है वह रूप ही है और उसका मूल कारण मन है। प्राण से क्रिया होती है। इसका तात्पर्य यह है कि प्राण के बिना अर्थात् वायु के बिना क्रिया (गति) नहीं होती है। गति का ही नाम क्रिया अर्थात् कर्म है। किसी कार्य के लिये जब कर्मेन्द्रियाँ क्रियायें करती हैं तो वहाँ प्राण या वायु ही क्रियाशील होते हैं। नाम के लिये वाक् कारण है अर्थात् संसार में हर एक वस्तु का नाम है। यह वाक् ही नाम रखती है। वाक् का अन्य नाम वाणी है। अब रूप, नाम और क्रिया ये तीनों संसार के हर एक वस्तु में रहते हैं। जो भी रूपवाला है उसका नाम अवश्य होगा। इस जगत् को नाम और रूपवाला कहा गया है। जैसे किताब यह रूप और नाम भी है और किताब को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं। अत एव इस में क्रिया भी है। तीनों ही चीज एक ही किताब में विद्यमान रहती हैं। रूप, नाम और क्रिया किताब में हैं। किताब का यदि नाश हो जाता है तो इन तीनों का अपने आप नाश हो जाता है । किताब के विनाशशील होने से ये तीनों मर्त्य हैं । अत एव अभ्व को मर्त्य नाम से जाना जाता है।

दिशा, देश और काल से अभ्व सीमित होता है।[5] हर एक वस्तु संसार कहलाता है। वह किसी न किसी दिशा अर्थात् पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण आदि दिशाओं में रहता है । दिशा

---

[1] आभ्वभ्वसंज्ञे स्त इमे च मूले । संशयतदुच्छेदवाद हिन्दीविज्ञानभाष्य, प्रथमकाण्ड, पृ.१३

[2] दृश्यं तु मतं तदभ्वम् ।संशयतदुच्छेदवाद हिन्दीविज्ञानभाष्य, प्रथमकाण्ड, पृ.१३

[3] संशयतदुच्छेदवाद हिन्दीविज्ञानभाष्य, प्रथमकाण्ड, पृ.१२

[4](क) यत्कर्म यद्रूपमथास्य नामेत्येतत्त्रयं त्वभ्वमिति ब्रुवन्ति । संशयतदुच्छेदवाद हिन्दीविज्ञानभाष्य, प्रथमकाण्ड, पृ.२२

(ख) यत्कर्म यन्नाम यदस्य रूपं तदभ्वम्। वही, पृ.३०

[5]दिग्देशकालैः प्रमितं त्वसद्वत् तत्कर्म तद् दृश्यमिदं तदभ्वम्। संशयतदुच्छेदवाद हिन्दीविज्ञानभाष्य, प्रथमकाण्ड, पृ.१६

वस्तु मात्र को अपनी सीमा में बाँध लेती है। देश का अर्थ जगह है। संसार का कोई भी वस्तु किसी न किसी जगह पर ही रहती है। जगह भी उस वस्तु को अपनी सीमा में सीमित कर लेती है। काल का अर्थ समय है। भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमानकाल में ही संसार की सत्ता होती है। वस्तु का बोध काल से ही होता है। अत एव काल भी वस्तु को अपनी सीमा में बाँधता है। अभ्व अर्थात् संसार जो कि दिशा, देश और काल की सीमा में सीमित है। वह नित्य नहीं हो सकता है और सत् नहीं हो सकता है। अत एव वह अनित्य एवं असत् ही होगा। अतः संसार को अर्थात् अभ्व को असत्, अनित्य एवं विनासशील कहा गया है।

अभ्व पारिभाषिक शब्द को पण्डित ओझा ने संशयतदुच्छेदवाद, ब्रह्मविनय आदि ग्रन्थों में स्पष्ट किया है।